अहमदासाहब अब्दुल मुल्ला (मृतक) द्वारा विधिक प्रतिनिधिगण

बनाम

बीबीजान एवं अन्य

(सिविल अपील सं. 4190/2000)

21 अप्रैल, 2008

[डॉ. अरिजीत पसायत और तरुण चटर्जी, जे जे.]

परिसीमा अधिनियम, 1963- धारा 14 व अनुसूची का अनुच्छेद 54- परिसीमा अधिनियम, 1908-धारा 113- विक्रय करार की विर्निदिष्ट पालना का वाद-प्रतिवादी की पत्नी व बच्चों द्वारा कथित विक्रय के करार को प्रश्नगत करने का लम्बित वाद जिसमें वादी का पति पक्षकार बनाया गया था-इसका प्रभाव- प्रश्न कि क्या प्रश्नगत वाद प्रस्तुत करने का वाद हेतुक तभी पैदा हुआ जब अन्य वाद समाप्त हो गया-उच्च न्यायालय ने परिसीमा अधिनियम 1908 की धारा 113 के संदर्भ से (जो परिसीमा अधिनियम 1963 की अनुसूची के अनुच्छेद 54 के समान था) अभिनिर्धारित किया कि प्रश्नगत वाद समय सीमा में था-अपीलार्थी का तर्क कि उच्च न्यायालय द्वारा परिसीमा अधिनियम 1908 की धारा 113 का वास्तविक आशय विचार में नहीं रखा गया-विधिक स्थिति को स्पष्ट करने की आवश्यकता-मामला वृहद पीठ को निर्दिष्ट किया-विर्निदिष्ट अनुतोष अधिनियम 1963-धारा 20

प्रत्यर्थीगण ने विक्रय के करार की विर्निदिष्ट पालना हेतु वाद पेश किया। विचारण न्यायालय ने वाद को डिक्री किया परन्तु प्रथम अपीलीय न्यायालय ने परिसीमा के आधार पर वाद खारिज किया। प्रथम अपीलीय न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि प्रतिवादी की पत्नी व बच्चों द्वारा विक्रय के करार को प्रश्नगत करने के वाद का लम्बन, जिसमे प्रत्यर्थी संख्या 1 का पति पक्षकार बनाया गया था, परिसीमा अधिनियम 1963 की धारा 14 के अन्तर्गत परिसीमा का बचाव नहीं करता। प्रत्यर्थीगण ने उच्च न्यायालय के समक्ष द्वितीय अपील दायर की जो इस विधिक प्रश्न कि क्या प्रश्नगत दावा प्रस्तुत करने का वाद हेतुक तभी पैदा होता है जब अन्य वाद समाप्त हो गया हो, पर ग्रहण की गई। उच्च न्यायालय ने परिसीमा अधिनियम 1908 की धारा 113 के संदर्भ में (जो कि परिसीमा अधिनियम 1963 की अनुसूची के अनुच्छेद 54 के समान था) दावा समयावधि में होना अभिनिर्धारित किया।

अपीलार्थी का तर्क है कि उच्च न्यायालय द्वारा परिसीमा अधिनियम 1908 की धारा 113 का वास्तविक आशय विचार में नहीं रखा गया।

प्रकरण को वृहद पीठ को निर्दिष्ट करते हुए, न्यायालय ने अभिनिर्धारित कियाः

1.1 एस. ब्रहमानंद के मामले में इस न्यायालय ने अन्य बातों के साथ-साथ यह मत व्यक्त किया कि पहली नजर में हालांकि परिसीमा

अधिनियम 1963 की अनुसूची के अनुच्छेद 54 में उपयोग की गई अभिव्यक्ति "तारीख" कैलेण्डर की विशिष्ट तारीख का सूचक है परन्तु इस अभिव्यक्ति की लम्बे समय तक की गई न्यायिक व्याख्या की अनदेखी नहीं की जा सकती। न्यायालय ने मत व्यक्त किया कि विभिन्न उच्च न्यायालयों ने मामलों में भिन्न-भिन्न राय व्यक्त की है जो कि विवाद की विषय वस्तु है; कुछ ने इसकी व्याख्या कठोरता और शाब्दिक रूप से की है जबकि अन्य ने विस्तारित मत व्यक्त किया है। (पैरा 5) (720-सी-डी,720-जी-एच,721-ए)

1.2 एस. ब्रह्मानंद के प्रकरण के निर्णय से यह प्रकट होता है कि इस न्यायालय ने महसूस किया कि विधिक स्थिति को स्पष्ट करने की आवश्यकता थी परन्तु भिन्न परिस्थिक परिदृश्य व समकक्ष पीठ के विशिष्ट मत लेने के निर्णय मौजूद होने के तथ्य से, मामले को वृहत्तर पीठ को निर्दिष्ट करने से इंकार कर दिया। (पैरा 7) (725-बी-सी)

1.3 प्रश्नगत विवादों के महत्व को देखते हुए यह उचित होगा कि मौजूदा प्रकरण तीन माननीय न्यायाधीशों की पीठ द्वारा सुना जावे। (पैरा 8) (725-सी-डी)

एस. ब्रह्मानंद बनाम के. आर. मुथुगोपाल (2005) 12 एस. सी. सी. 764; रमजान बनाम हुसैनी (1990) 1 एससीसी 104; तरलोक सिंह बनाम विजय कुमार सभरवाल (1996) 8 एस. सी. सी. 367 और लक्ष्मीनारायण

रेड्डियार बनाम सिंगरावेलु नायकर व अन्य ए. आई. आर 1963 मद्रास 24- संदर्भित किया गया।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारः सिविल अपील संख्या -4190/ 2000

कर्नाटक उच्च न्यायालय, बैंगलोर द्वारा आर.एस.ए. संख्या-1225/1996 में दिनांक 31.08.1998 को पारित अंतिम निर्णय व आदेश से

अपीलार्थी की ओर से राजेश महाले व आर.सी. कोहली

प्रत्यर्थीगण की ओर से जावेद एम. राव व अशोक कुमार शर्मा

न्यायालय का निर्णय डॉ. अरिजीत पासायत, जे. द्वारा दिया गया।

1. इस अपील में विद्वान एकल न्यायाधीश, कर्नाटक उच्च न्यायालय के द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (संक्षेप में 'सी. पी. सी.') की धारा 100 के अधीन प्रत्यर्थीगण द्वारा दायर द्वितीय अपील को स्वीकार करने के आदेश को चुनौती दी गई है । वर्तमान प्रत्यर्थीगण वादीगण हैं। उन्होंने विक्रय संविदा की विर्निदिष्ट पालना के लिए वाद दायर किया था जो विचारण न्यायालय द्वारा डिक्री किया गया, परन्तु प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा परिसीमा के आधार पर खारिज कर दिया गया और इसीलिए द्वितीय अपील दायर की गई थी।

2. संक्षेप में पृष्ठभूमि के तथ्य इस प्रकार हैं:

वादी संख्या 1 के पति ने गृह सम्पत्ति संख्या सी टी एस 2565, वार्ड संख्या 5, मुधोल समकक्ष नगरपालिका नम्बर 536 का विक्रय करार दिनांक 15.11.1974 को 6,000/- रुपये के प्रतिफल के लिए किया। रूपये 1000/- की राशि का भुगतान किया गया और तत्पश्चात दिनांक 21-12-1974 और 13-8-1975 को रूपये 300/- और रूपये 600/- की दो राशियों का भुगतान किया गया। परन्तु इसी दौरान प्रतिवादी की पत्नी और बच्चों द्वारा विक्रय करार को प्रश्नगत करने का वाद ओ.एस. संख्या 72/76 दायर किया गया, जिसमें वादिया के पति को पक्षकार बनाया गया था। यह वाद दिनांक 4-8-1977 को खारिज कर दिया गया। प्रथम अपील आर. ए. 84/77 दायर की गई जिसे बाद में आर. ए. 83/79 के रूप में क्रमांकित किया गया, दिनांक 18-8-1979 को खारिज की गई तथा द्वितीय अपील आर. एस. ए. संख्या 385/80 भी दिनांक 5-6-1980 को खारिज कर दी गई। इसलिए विक्रय करार की विर्निदिष्ट पालना के लिए वर्तमान वाद 15.9.1981 को दायर किया गया।

प्रतिवादी ने तर्क दिया कि वादग्रस्त मकान उसके मृत पिता का था और उसके मृत पिता ने वादग्रस्त सम्पत्ति का कब्जा सुपुर्द करते हुए, उसे और उसकी पत्नी और अवयस्क बच्चों को मौखिक उपहार दिया था। चूंकि उसके पास अपने परिवार की जरूरतों को पूरा करने के लिए आय का कोई स्रोत नहीं था इसलिए वादिया के मृत पति ने उसे धन उधार देने का वादा किया और प्रतिवादी प्रतिभूति के रूप में संपत्ति देने के लिए सहमत हो

गया। ऐसी परिस्थितियों के अधीन उसने वादग्रस्त करार निष्पादित किया और मोदीनसाहब से ऋण प्राप्त किया। उसने कब्जा नहीं छोड़ा था। उसने आगे तर्क दिया कि वाद परिसीमा से बाधित है और वादी कभी भी तैयार और इच्छुक नहीं था। अंततः, उसने यह तर्क देते हुए कि वादग्रस्त मकान उसके और उसके परिवार के सदस्यों के लिए एकमात्र आश्रय है तथा उसे विक्रय करार की पालना करने के लिए निर्देशित नहीं किया जा सकता,वाद का विरोध किया।

विचारण न्यायालय ने करार पर भुगतान होना पाते हुए स्वीकार किया और सुसंगत अधिनियम के अंतर्गत प्रतिवादी को देनदार नहीं मानते हुए प्रतिवादी द्वारा उठाये गये असंयोजन और ऋण लेने के कथनों को खारिज करते हुए विनिर्दिष्ट पालना की डिक्री पारित की।

अपीलीय न्यायालय ने पाया कि विचारण न्यायालय, करार और आंशिक पालना के माध्यम से कब्जा छोड़ने और विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 (संक्षेप में 'अधिनियम')की धारा 20 के प्रावधान अनुसार विनिर्दिष्ट पालना मंजूर करने से प्रतिवादी को कोई कठिनाई नहीं होना स्वीकार करने में सही है परन्तु परिसीमा के आधार पर, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि परिसीमा अधिनियम, 1963 (संक्षेप में 'परिसीमा अधिनियम') की धारा 14 के अर्थ में दूसरे वाद का लम्बन परिसीमा का बचाव नहीं करता, वाद खारिज किया गया।

द्वितीय अपील निम्न विधिक प्रश्नो पर ग्रहण की गई-

> "क्या लक्ष्मीनारायण रेड्डियार बनाम सिंगरावेलु नाइकर और अन्य ए.आई.आर. 1963 मद्रास 24 के निर्णय अनुसार लिया गया यह तर्क कि जब उसी की पत्नी व बच्चों द्वारा स्वामित्व प्रश्नगत करने का दूसरा वाद समाप्त हो गया, तभी वाद प्रस्तुत करने के लिए वाद हेतुक उत्पन्न होता है।"

उच्च न्यायालय ने पाया कि जैसा कि मद्रास उच्च न्यायालय ने लक्ष्मीनारायण के प्रकरण (उपरोक्त) में अभिनिर्धारित किया कि जहां स्वामित्व विलेख सम्मिलित है वहां मोचन के लिए लिया गया समय परिसीमा अधिनियम की धारा 14 के अन्तर्गत छोड़ा जायेगा। यह अभिनिर्धारित किया कि कोई विपरीत निर्णय प्रस्तुत नहीं किया गया है इसलिए परिसीमा अधिनियम, 1908 की धारा 113(संक्षेप में पुराना अधिनियम) के अन्तर्गत वाद समयावधि के अन्दर था।

3. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि परिसीमा अधिनियम की धारा 113 का वास्तविक आशय विचार में नहीं रखा गया है।

4. दूसरी ओर प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने उच्च न्यायालय के आदेश का समर्थन किया।

5. एस. ब्रह्मानंद बनाम के. आर. मुथुगोपाल (2005)12 एस सी सी 764) के प्रकरण में इस न्यायालय ने विभिन्न उच्च न्यायालयों द्वारा दिये गये निर्णयों का अवलोकन करने के पश्चात निम्न मत व्यक्त कियाः

"16. दोनों पक्षों द्वारा प्रस्तुत किये गये तर्को का समालोचनात्मक मूल्यांकन करने से पूर्व अनुच्छेद 54 के प्रावधानों का उल्लेख करना उपयोगी होगा।

वाद का वर्णन परिसीमा वह समय, जब से काल चलना आरम्भ काल होता है-

54. किसी संविदा के विनिर्दिष्ट तीन वर्ष पालन के लिए नियत की गई तारीख पालन के लिए या यदि ऐसी तारीख नियत नहीं की गई है तो जब वादी को यह सूचना हो जाए कि पालन से इंकार कर दिया गया है।

---

17. दूसरी ओर हालांकि पहली नजर में यह प्रतीत हो सकता है कि परिसीमा अधिनियम, 1963 के इस अनुच्छेद में इस्तेमाल किया गया शब्द "तारीख" कैलेण्डर की विशिष्ट दिनांक का सूचक है परन्तु इस अभिव्यक्ति की लम्बे समय तक की गई न्यायिक व्याख्या की अनदेखी नहीं की जा

सकती। विभिन्न उच्च न्यायालयों ने मामले में अलग-अलग राय व्यक्त की है जो कि विवाद की विषय वस्तु है। कुछ ने इसकी व्याख्या कठोरता और शाब्दिक रूप से की है जबकि अन्य ने विस्तारित मत व्यक्त किया है।

18. काशी प्रसाद बनाम छबी लाल में उच्च न्यायालय, परिसीमा अधिनियम 1908, के अनुच्छेद 113 जो कि परिसीमा अधिनियम, 1963, की अनुसूची के अनुच्छेद 54 के एक समान था, में व्यवहार करते हुए यह मत दिया कि "नियत" शब्द का तात्पर्य है कि तारीख निश्चित रूप से तय की जानी चाहिए और मामले के आसपास की परिस्थितियों से एकत्र होने के लिए नहीं छोड़ी जानी चाहिए। यह तारीख संविदा में, चाहे वह मौखिक हो या लिखित, स्पष्ट रूप से उल्लेखित होनी चाहिए।

19. अलोपी प्रशाद बनाम कोर्ट ऑफ वार्डस में भी न्यायालय परिसीमा अधिनियम 1908 के अनुच्छेद 113 के साथ संबंधित था। विक्रय करार के आधार पर विर्निदिष्ट अनुपालन के लिए वाद लाया गया था जहांं संविदा के अनुपालन का समय "डिक्री पारित होने के बाद" का था। हालांकि करार के अनुपालन के लिए कोई दिनांक नियत

नहीं थी, परन्तु विचारण न्यायालय का मत था कि इड सर्टम ऐस्ट क्वाड सर्टम रेड्डिड पोटेस्ट ("जो पर्याप्त रूप से निश्चित है उसे निश्चित किया जा सकता है") के आधार पर जिस दिनांक को डिक्री पारित की गई थी उससे समय का चलना प्रारंभ होना तय किया जाना चाहिए था। लाहौर उच्च न्यायालय का मत था कि परिसीमा के कानूनों का सख्ती से अर्थ लगाया जाना चाहिए और प्रत्यर्थीगण उसके समक्ष अनुच्छेद 113 के प्रथम भाग की परिधि में विशेष रूप से मामले को लाने में असफल रहे थे और यह मामला प्रथम भाग के अन्तर्गत नहीं आता था बल्कि अनुच्छेद 113 के द्वितीय भाग के अन्तर्गत आता था। 'काशी प्रशाद' में इलाहाबाद उच्च न्यायालय का निर्णय अनुमोदनपूर्वक संदर्भित किया गया और अनुमोदित किया गया। यह निर्णय प्रिवी कौन्सिल के समक्ष अपील में ले जाया गया और लाला रामस्वरूप बनाम कोर्ट आॅफ वार्डस में प्रिवी कौन्सिल द्वारा अनुमोदित किया गया ।

20. कृत्तिवेंती मल्लिकार्जुन राव बनाम वेमुरी पार्थसारधीराव में 18.07.1934 को एक संविदा की गई थी और विक्रेता ने उसके दोनों भाई जो अन्यत्र पढ़ रहे थे, के अगली छुटटी यानि मई-जून 1935 में गांव लौट आने पर

विक्रय विलेख निष्पादित करने का वायदा किया था । उच्च न्यायालय ने निर्णित किया (ए.आई.आर. पृष्ठ 218) कि संविदा की अनुपालना के लिए एक तारीख नियत करने के रूप में यह बहुत अनिश्चित था तथा परिसीमा की अवधि की गणना निष्पादन से इंकार की दिनांक से की जानी चाहिए।

21. आर. मुनीस्वामी गौंडर बनाम बी.एम. शमन्ना गौड़ा में परिसीमा अधिनियम 1908 के अनुच्छेद 113 में "नियत तारीख " अभिव्यक्ति का अर्थान्वयन करने में इड सर्टम ऐस्ट क्वाड सर्टम रेड्डिड पोटेस्ट के सिद्धांत को ब्रूम की लीगल मैक्सिम में की गई व्याख्या सहित प्रयोग में लिया गया और यह निर्णीत किया गया कि यह एक तारीख को सम्मिलित करने हेतु बहुत विस्तृत था जो कि यद्यपि संविदा करने के समय अज्ञात थी परन्तु बाद में होने वाली किसी निश्चित घटना से तय की जा सकती थी।

22. हचेगौड़ा बनाम एच.एम. बसवैया में मुनीस्वामी गौंडर के मत को बरकरार रखते हुए यह अधिनिर्णीत किया गया कि 'सगुवली चिट" दिये जाने के बाद विक्रय पत्र के निष्पादन का करार परिसीमा अधिनियम 1908 के अनुच्छेद 113 के प्रथम भाग के अन्तर्गत आता है।

23. पुरूषोत्तम सावा बनाम कुंवरजी देवजी में मद्रास उच्च न्यायालय के आर. मुनीस्वामी गौंडर के निर्णय का अनुसरण किया गया और यह अधिनिर्णीत किया गया कि अभिव्यक्ति "नियत तारीख" का अर्थ, या तो अभिव्यक्त रूप से तय की गई दिनांक या भविष्य की किसी निश्चित घटना की तारीख होना, लगाया जा सकता है।

24. लक्ष्मीनारायण रेड्डियार बनाम सिंगरावेलु नायकर में यह अधिनिर्णीत किया गया कि परिसीमा अधिनियम, 1908 के अनुच्छेद 113 के तीसरे स्तम्भ में आये हुए वाक्यांश "पालन के लिए नियत तारीख" न केवल एक विशिष्ट बिन्दु के रूप में, बिना किसी संदेह के पहचान योग्य, निश्चित तारीख ही नहीं होनी चाहिए बल्कि यह एेसी तारीख होनी चाहिए जिस पर पक्षकार संविदा के पालन हेतु आशयित थे।

25. श्रीकृष्ण केशव कुलकर्णी बनाम बालाजी गणेश कुलकर्णी में सम्पति विक्रय के करार में अंकित था कि विक्रय, लेनदारों द्वारा लाये गये कुर्की, के हटने के पश्चात निष्पादित किया जावेगा। इस तथ्य पर ध्यान देते हुए कि इस बारे में कोई संकेत नहीं था कि कुर्की कब हटायी

जाएगी, न्यायालय ने इसे एक एेसे मामले के रूप में माना जिसमें संविदा की पालना के लिए कोई तारीख् तय नहीं की गई थी और इसलिए परिसीमा अधिनियम 1963 के अनुच्छेद 54 के दूसरे भाग के अन्तर्गत आना पाया।

26. पी.सिवन मुथैया बनाम जान साथियावसगम विक्रय के करार के अधीन चुकाए गए अग्रिम की वसूली की वैकल्पिक प्रार्थना के साथ विर्निदिष्ट अनुपालना के वाद में उठा। परिसीमा अधिनियम, 1963 के अनुच्छेद 54 का उल्लेख करते हुए न्यायालय ने दृष्टिकोण लिया कि अभिव्यक्ति "नियत तारीख" का अर्थ या तो अभिव्यक्त रूप से तय की गई तारीख हो सकता है या वह तारीख हो सकता है जो भविष्य की किसी घटना, जिसका घटित होना निश्चित हो, के संदर्भ में तय की जा सके। यदि तारीख् का तय किया जाना ऐसी घटना पर निर्भर करता है जिसका घटित होना निश्चित नहीं है तो अनुच्छेद 54 का प्रथम भाग लागू नहीं होगा और ऐसी संभाव्यता में अनुच्छेद 54 का केवल बाद वाला भाग, इसे एक एेसा मामला मानते हुए लागू किया जा सकता है जिसमें अनुपालन हेतु कोई तारीख तय नहीं थी और परिसीमा उस तारीख से 3 वर्ष होगी जब वादी को सूचना मिली कि अनुपालन से इंकार कर दिया

गया है। यह एक ऐसा मामला था जहां सम्पत्ति के किरायेदारों के खाली कर दिये जाने के पश्चात अनुपालन किया जाना था। न्यायालय ने यह अभिमत दिया कि चूंकि किरायेदारों की बेदखली एक अनिश्चित घटना थी, समय का चलना केवल उसी तारीख से ही माना जाना चाहिए जब वादीगण को सूचना हुई कि प्रतिवादीगण द्वारा अनुपालन से इंकार कर दिया गया है।

27. रमजान बनाम हुसैनी में एक मकान की विक्रय संविदा की विनिर्दिष्ट अनुपालना के लिए दायर किया गया वाद था। सम्पत्ति बंधक की हुई थी और वादी के अनुसार प्रतिवादी ने वादिया स्वयं द्वारा बंधक मोचन करने पर विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए सहमति दी, जो वादिया ने 1970 में किया था। उसकी बार-बार मांग के बावजूद प्रतिवादी अपनी भूमिका निभाने में असफल रहा जिसके परिणाम में वाद दायर किया जा रहा है। इस न्यायालय के समक्ष प्रश्न उठा कि क्या करार वह था जिसमें करार की अनुपालना के लिए तारीख नियत की गई थी या जिसमें एेसी कोई तारीख नियत नहीं की गई थी। इस न्यायालय ने प्रश्न का यह अभिनिर्धारित करते हुए सकारात्मक उत्तर दिया कि यद्यपि दस्तावेज में एक विशेष

कैलेण्डर तारीख का उल्लेख नहीं किया गया था और यद्यपि मूल रूप से तारीख निश्चित नहीं की जा सकती थी, जैसे ही वादी ने बंधक का मोचन करवाया यह एक निश्चित तारीख हो गई। यह न्यायालय, आर.मुनीस्वामी गौंडर में मद्रास उच्च न्यायालय में अभिव्यक्त किये गये मत के साथ भी सहमत था और अभिनिर्धारित किया कि इड सर्टम ऐस्ट क्वाड सर्टम रेड्डि पोटेस्ट का सिद्धांत स्पष्ट रूप से लागू होने योग्य है। यह कृत्तिवेंती मल्लिकार्जुन राव और काशी प्रशाद के मामलों से भी अलग था क्योंकि प्रकरण अपने विशिष्ट तथ्यों से उत्पन्न हुए थे।

28. तरलोक सिंह बनाम विजय कुमार सभरवाल में करार के पक्षकारों ने संविदा की पालना के लिए तारीख निर्धारित की थी जिसे बाद के करार द्वारा निर्धारित करते हुए बढ़ाया गया था कि अपीलार्थीगण, वाद में स्वीकृत किये गये व्यादेश को समाप्त करने के आदेश की तिथि से 15 दिन में विक्रय विलेख निष्पादित करवायेंगे। वाद प्रारंभतः खारिज किया गया और उसके बाद एक पुर्नावलोकन आवेदन-पत्र भी दिनांक 22.03.1986 को वापिस लेने से खारिज किया गया। दिनांक 23.12.1987 को शाश्वत व्यादेश के लिए एक वाद प्रस्तुत किया गया। उस वाद में आदेश 6

नियम 17 सी.पी.सी. के अन्तर्गत एक प्रार्थना-पत्र पेश किया गया कि इस वाद को दिनांक 18.08.1984 के करार की विर्निदिष्ट अनुपालना के वाद में परिवर्तित किया जावे। यह संशोधन दिनांक 25.08.1989 को अनुमत किया गया। यह अभिनिर्धारित किया गया कि चूंकि संशोधन का आदेश 25.08.1989 को दिया गया था तो यह जांचने के लिए महत्वपूर्ण तिथि 25.08.1989 थी कि क्या वाद परिसीमा द्वारा वर्जित था। चूंकि मूल वाद प्रारंभतः खारिज हुआ, तब व्यादेश रद्द हो गया था और पुर्नावलोकन आवेदन 22.03.1986 को खारिज किया गया था, यह अभिनिर्धारित किया गया कि यह अनुच्छेद 54 के प्रथम भाग के अन्तर्गत आने वाली स्थिति थी और किसी भी स्थिति में, 25.08.1989 को वाद परिसीमा द्वारा वर्जित था।"

6. इस न्यायालय का मत था कि विभिन्न उच्च न्यायालयों के निर्णयों में भिन्न-भिन्न मत दिए गये हैं जो प्रिवी कौन्सिल के निर्णय से भिन्न थे । हालांकि, रमजान बनाम हुसैनी (1990 (1) एस. सी. सी. 104) और तरलोक सिंह बनाम विजय कुमार सभरवाल (1996 (8) एस. सी. सी. 367) के निर्णयों को दृष्टिगत रखते हुए विस्तृत विवाद में जाने की आवश्यकता नहीं थी क्योंकि वादीगण उस प्रकरण में अलग आधारों पर सफल होने के हकदार थे।

7. एस. ब्रह्मानंद के प्रकरण (उपरोक्त) के निर्णय से यह प्रकट होता है कि इस अदालत ने अनुभव किया कि विधिक स्थिति को स्पष्ट करने की आवश्यकता थी। परन्तु भिन्न पारिस्थितक परिदृश्य तथा निर्णयों के लम्बे समय तक स्थिर रहने व दो माननीय न्यायाधीशों की समकक्ष पीठ के विशिष्ट मत लेने के निर्णय के कारण मामला वृहत्तर पीठ को निर्दिष्ट करने से इंकार कर दिया ।

8. इसमें शामिल मुद्दों के महत्व को देखते हुए, हम महसूस करते हैं कि इस मामले की सुनवाई तीन माननीय न्यायाधीशों की पीठ द्वारा किया जावे। हम, इसलिए, इस मामले को वृहत्तर पीठ को निर्दिष्ट करते हैं। अभिलेख आवश्यक निर्देशों हेतु भारत के माननीय मुख्य न्यायाधीश के समक्ष रखे जावें।

बी.बी.बी.

वृहत्तर पीठ को निर्दिष्ट।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी दीपक कुमार (आर.जे.एस.), द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण : यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।